मूल्य 1 रूपया

कृषक समाचार

भारत कृषक समाज का मासिक मुख पत्र

कृषक समाचार की 32,000 प्रतियां सन् 1960 से हर महीने छापकर सदस्यों को भेजी जाती हैं

वर्ष 64 | नवंबर, 2019 | अंक 11 | कुल पृष्ठ 8

सभापति का पत्र :

वर्तमान में 'प्वाइंट ऑफ सेल्स' (पीओएस) मशीनों का उपयोग खुदरा विक्रेताओं द्वारा किसानों को की गई बिक्री को सत्यापित करने के लिए किया जाता है। पीओएस मशीनों के बिक्री आंकडों पर, सब्सिडी का भुगतान सीधे कंपनियों को किया जाता है।

केंद्र सरकार द्वारा समय पर उद्योग को सब्सिडी घटक जारी नहीं करने के कारण, उद्योग द्वारा उर्वरक सब्सिडी प्राप्तियों में रू. 1 लाख करोड़ की बढत हुई है। भुगतान में यह देरी नहीं है कि उर्वरक कंपनियां किसानों के खाते में सब्सिडी घटक के प्रत्यक्ष लाभ भुगतान के लिए क्या कह रही है। उद्योग का मकसद सिर्फ सरकार से किसान पर सब्सिडी इकट्ठा करने का बोझ डालना है। बिलकुल वही जो अब सरकार प्रस्तावित कर रही है।

जब सरकार साल–दर–साल एक मुट्ठी उर्वरक कंपनियों को सब्सिडी घटक हस्तांतरित करने में असमर्थ होती है, तो सरकार को प्रत्येक सीजन की शुरूआत से पहले लाखों किसानों के खातों में सब्सिडी घटक को हस्तांतरित करने की उम्मीद या भरोसा नहीं किया जा सकता है।

किसानों को डीबीटी के लिए पहले कृषकों की पहचान की आवश्यकता होगी, जो एक बड़ी समस्या है। अधिकांश किरायेदार किसान पंजीकृत नहीं हैं। जब तक भू–अभिलेख का रिकॉर्ड सही नहीं हो जाता, तब तक इस तरह की योजना असफल है। तब सभी प्राप्तकर्ता किसानों के पास ई–वॉलेट खाते या इसी तरह होने चाहिए।

एक डीबीटी पूरे देश के लिए प्रति एकड़ के आधार पर समान रूप से डिजाइन नहीं

किया जा सकता है। उर्वरक सब्सिडी पीएम किसान की तरह आजीविका सब्सिडी नहीं है (जहां किसानों का बड़ा प्रतिशत अभी तक पंजीकृत नहीं किया गया है और भुगतान समय पर नहीं मिल रहा है)। उर्वरक सब्सिडी देश में पैदावार बढ़ाने और पर्याप्त उत्पादन और खाद्य भंडार को सुरक्षित करने के लिए दी जाती है। न ही सभी फसलों को नाइट्रोजन की आवयकता होती है। विभिन्न फसलों के लिए, उर्वरक की विभिन्न खुराक की आवश्यकता होती है।

सरकार का इरादा सब्सिडी के बोझ को कम करने के लिए लगता है। लेकिन, किसानों को दर्द हस्तांतरित करने का तरीका सही नहीं है। उर्वरक कंपनियों और सहकारी समितियों के एक फोरेंसिक ऑडिट को वास्तव में विनिर्माण उर्वरकों की लागत निर्धारित करने की आवश्यकता होती है, जिसके आधार पर सब्सिडी तय की जाती है। एक ऑडिट मंत्रालय द्वारा नहीं बल्कि सीऐजी द्वारा और राज्य सरकारों और किसान यूनियनों की एक समिति द्वारा सत्यापित किया जाना चाहिए।

– अजय वीर जाखड़

अध्यक्ष, भारत कृषक समाज

@ajayvirjakhar

o-o-o-o-o-o-o-o-o-o-o-o-o

कृषि से विस्थापन का विवरण

भारतीय कृषि में रोजगार को प्रभावित करने वाले सामान्य कारण

अर्थतंत्र में जैसे–जैसे मजबूती आती है, अतिरिक्त श्रमिकों का न्यून उत्पादकता वाले कृषि क्षेत्र से उच्चतर उत्पादकता वाले निर्माण और सेवा क्षेत्र की ओर स्वाभाविक झुकाव होता है क्योंकि इन दोनों क्षेत्रों में उत्पादकता और मजदूरी अपेक्षाकृत ज्यादा होती है। गाँव से शहर की ओर कृषि से अलग होने की गति अर्थतंत्र के विकास के साथ बढ़ती जाती है। इन परिघटना की विस्तृत व्याख्या आवश्यक है क्योंकि इसके पीछे और भी कई कारण होते हैं।

श्रमिकों के कृषि क्षेत्र से विस्थापन के दो महत्वपूर्ण कारण हैं। पहला, कारण है 'आकर्षण'। अर्थतंत्र के तेज विकास से गैर–कृषि क्षेत्र में रोजगार के ज्यादा अवसर पैदा होते हैं। इसके फलस्वरूप श्रमिकों में कृषि को छोड़कर उच्चतर उत्पादकता और उच्चतर मजदूरी वाले निर्माण एवं सेवा क्षेत्र की ओर जाने का आकर्षण बढ़ता है।

हालाँकि, भारतीय अर्थतंत्र वृद्धि की गति कमजोर होने के कारण श्रमिकों में कृषि से विस्थापन के रूझान में कमी के संकेत मिल रहे हैं। तथापि, गैर–कृषि क्षेत्र में, मुख्यतः लघु उद्योगों में श्रमिकों की माँग कमोबेश अनियमित रही है। अनियमित श्रमिक और छोटे पैमाने के रोजगार (उद्योग के आकार के अनुसार) का अनुपात भी यही बताता है कि भारत के गैर–कृषि क्षेत्र में उत्पादकता का स्तर अपेक्षाकृत नीचा है। दूसरे शब्दों में इस ओर रूझान में कमी है। लेकिन भारत में यदि लगातार उच्च विकास के प्रयास और श्रम कानूनों में सुधार किए जाऐं तो इसमें मजबूती आ सकती है।

इसके अलावा, भारत में ग्रामीण कृषि से शहरी निर्माण और सेवा के क्षेत्र में विस्थापन की गति भी धीमी है। भारत में शहरीकरण का अनुपात चीन के 50 प्रतिशत की तुलना में 30 प्रतिशत के आस–पास है। भारत में गाँव से शहर की ओर प्रवासन का स्पष्ट रूझान होने के बावजूद इसकी गति धीमी रही है जिससे इसके कमजोर होने का पता चलता है।

दूसरी ओर, कृषि से दूसरे क्षेत्रों में श्रम आपूर्ति पर ग्रामीण इलाकों में प्राप्त मजदूरी का भी असर हुआ है। मननेगा (राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम) जैसे सामाजिक कल्याण के कार्यक्रमों से असल में ग्रामीण आमदनी और उत्साह में बढ़ोतरी हुई है जिससे कृषि से अलग होने के 'दबाव' में कमी आई है। गाँवों में जैसे–जैसे मजदूरी बढ़ती है, शहरी श्रम बाजार में विसंगति पैदा होती है और 'दबाव' के कारक तत्व कमजोर पड़ जाते हैं।

इन कारक तत्वों का असर पुरूषों और स्त्रियों पर एक समान नहीं है। पुरूषों की तुलना में ग्रामीण स्त्रियों के काम–काज की विविधता और कृषि से उनके अलग होने की गति में कमी देखी गई है।

मनरेगा समेत विभिन्न सरकारी योजनाओं की बदौलत वर्ष 2006–07 के बाद से ग्रामीण मजदूरी में 17 प्रतिशत के औसत दर से वृद्धि हो रही है जो शहरी मजदूरी के वृद्धि दर से आगे निकल चुकी है (गोल्डमैन सैश, 2014)। इस अध्ययन के निष्कर्ष के अनुसार ग्रामीण मजदूरी में वृद्धि के पीछे दरअसल मनरेगा में शामिल होने वाले परिवारों की हिस्सेदारी एक बड़ा कारण है। इस अध्ययन से यह अवधारण भी सत्य साबित होती है कि जिन राज्यों में मनरेगा को अधिक पैमाने पर लागू किया गया है वहाँ मुद्रास्फीति बढ़ी है। अध्ययन के अंत में कहा गया है कि न केवल खेतिहर

मजदूर शहरी क्षेत्रों में नहीं जा रहे हैं बल्कि उत्पादकता में बढ़ोतरी के बगैर मजदूरी में बढ़ोतरी के कारण मुद्रास्फीति में उछाल आ रहा है।

संक्षेप में कहा जाए तो कृषि में श्रम की उपलब्धता बच्चों की शिक्षा और अवस्था जैसे कतिपय सामाजिक कारकों के अलावा अनिवार्य रूप से गैर–कृषि क्षेत्र में रोजगार के सृजन, शहरीकरण की गति, सामाजिक योजनाओं, ग्रामीण क्षेत्र में प्रोत्साहन और कृषि क्षेत्र में पारिश्रमिक पर निर्भर करती है।

श्रमिक अल्पता के प्रमुख कारणों का पता लगाने हेतु 2011 में किए गए एक सर्वेक्षण के अनुसार 'स्थानीय स्तर के अन्य काम–धंधों में ज्यादा मजदूरी' को 'सबसे पहला' कारण के रूप में चिन्हित किया गया। सर्वेक्षण में कहा गया कि स्थानीय स्तर पर राजगिरी, बढ़ईगिरी, बिजली और प्लम्बिंग जैसे गैर–कृषि काम–धंधों में ज्यादा मजदूरी मिलने के कारण खेतिहर मजदूर इनकी ओर आकर्षित हुए। चूँकि खेतीबारी की कार्यकुशलता का कोई महत्व नहीं होता इसलिए मजदूर वैसे दूसरे काम अपना लेते हैं जिनमें उन्हें ज्यादा मजदूरी मिल सकती है।

खेती का काम मौसमी होता है और खाली मौसम में मजदूरों को बेरोजगारी झेलनी पड़ती है। इसके चलते वे पूरे साल आमदनी देने वाले नियमित/स्थायी काम की तलाश करने लगते हैं। यह दूसरा सबसे बड़ा कारण माना गया।

खेतीहर मजदूर के रूप में काम करने को गाँवों में नीची नजर से देखा जाता है और इसे तीसरा सबसे बड़ा कारण माना गया। शैक्षणिक स्तर में सुधार के कारण बाहर जाने, ज्यादा मजदूरी के लिए नजदीकी शहरों की ओर प्रवासन और विदेशों में प्रवासन को क्रमशः चौथा, पाँचवाँ और छठा सबसे बड़ा कारण माना गया।

'द इकोनॉमिस्ट' में छपी एक रिपोर्ट में यह रेखांकित किया गया है कि किस प्रकार शहरों में अधिक–से–अधिक मजदूर नौकरी को एक 'सुरक्षा कवच' के रूप में मान रहे हैं जिससे उन्हें ज्यादा मजदूरी मिले और बेगारी कम हो सके।

कृषि में श्रम अल्पता के कारण (महत्व के क्रमानुसार)

1. स्थानीय स्तर पर ज्यादा मजदूरी वाले अन्य काम–धंधों की उपलब्धता।
2. खेती का काम मौसमी होने के कारण किसी नियमित/स्थायी काम में लगना।

3. खेतीहर मजदूरी के प्रति अपमानजनक नजरिये का होना।
4. ज्यादा मजदूरी के लिए निकटवर्ती शहरों की ओर प्रवासन।
5. शैक्षणिक स्तर में उन्नति के कारण प्रवासन।
6. विदेशों की ओर प्रवासन।

अगले खंडों में हमने श्रमिक अल्पता के कारणों का विश्लेषण करने और उपर्युक्त कारणों में से कुछेक की विश्वसनीयता एवं महत्व का मूल्यांकन करने का प्रयास किया है।

श्रमिकों के अभाव की गुत्थी का समाधान

भारतीय कृषि में आगे उत्पादकता बढ़ने के लिए इंतजार करना पड़ेगा क्योंकि इस क्षेत्र से परंपरागत रूप से सस्ते और अतिरिक्त श्रमिकों का पलायन हो रहा है। यदि श्रमिक आवश्यकता के विकल्प के पर्याप्त उपाय नहीं किए गए तो खेतों की उत्पादकता प्रभावित हो सकती है जिसका अप्रत्यक्ष प्रभाव पैदावार की कीमतों पर पड़ेगा।

चूँकि इनपुट लागतों में बढ़ोतरी के कारण खेती से लाभ में कमी आती है और महँगाई का फायदा अक्सर किसानों को नहीं मिल पाता है, इसलिए खेती से होने वाले रिटर्न पर असर हो रहा है। इससे मजदूरों को प्रतिस्पर्धात्मक मजदूरी देने की किसानों की क्षमता पर बुरा असर होता है। दूसरी ओर, वैकल्पिक उद्योगों में अवसर पैदा हो रहे हैं जो तेज गति से बढ़ रहा है। इन क्षेत्रों में सालों भर काम मिलता है और खेतीहर मजदूर इनकी ओर आकर्षित हो रहे हैं।

इन कारणों के चलते खेती में श्रमिकों की कमी हो रही है जिसके माँग और आपूर्ति की खाई बढ़ गई है। नतीजतन हर साल खेतिहर मजदूरी अपेक्षाकृत अधिक तेजी से बढ़ रही है और बदले में खेती की सकल लागत बढ़ रही है जबकि रिटर्न में कोई खास इजाफा नहीं हो रहा है।

हालाँकि देश के अलग–अलग हिस्सों में श्रमिकों की कमी के अनेक और भी कारण हैं तथापि उपर सूचीबद्ध किए गए कारणों का असर अधिक है जिनका विस्तृत विश्लेषण अगले खंडों में किया गया है।

कृषि में न्यून पारिश्रमिक के साक्ष्य

कृषि में न्यून पारिश्रमिक के अनेक कारण हैं। जोत की जमीन का औसत वर्ष 1971 के 2.3 हेक्टेयर से घटकर 2011 में 1.16 हेक्टेयर पर आ गया। उर्वरक और श्रमिक जैसे निवेश लागत में बढ़ोतरी से खेती की लागत बढ़ है और प्रत्येक खेत से होने वाले रिटर्न में कमी हुई है। सौदेबाजी की सीमित ताकत रखने वाले छोटे और सीमांत किसानों के लिए उनकी पैदावार पर मिलने वाली कीमत अक्सर बाजार दर के अनुरूप नहीं होती जिससे भावी आमदनी प्रभावित होती है। सभी फसल करने वाले किसानों के लिए पारिश्रमिक की तुलना से पता चलता है कि एक किसान को प्रति हेक्टेयर धान की खेती से प्रति माह लगभग 2,400 रूपये और प्रति हेक्टेयर गेहूँ से प्रति माह लगभग 2,600 रूपये की कमाई होती है। दूसरी ओर खेतीहर मजदूर प्रति माह लगभग 5,000 रूपये से भी कम कमा पाते हैं। आँध्र–प्रदेश के तीन जिलों में केपीएमजी द्वारा वर्ष 2012 में किए गए एक अध्ययन में बताया गया है कि एक छोटे किसान की प्रति माह कमाई 1,100 से 3,000 रूपये और बड़े किसान की 3,000 से 6,000 रूपये तक होती है जबकि भूमिहीन मजदूर की कमाई प्रति माह 1,300 से 3,000 रूपये के बीच थी। स्त्रियों के लिए खेतीहर दैनिक मजदूरी पुरूषों के मुकाबले खेती संबंधी कार्यों के आधार पर 15 प्रतिशत से 30 प्रतिशत तक कम है।

दूसरी ओर एक औसत औद्योगिक मजदूर लगभग 7,000 रूपये प्रति माह और निर्माण मजदूर 8,000 रूपये प्रतिमाह की कमाई कर लेता है। इसके अतिरिक्त, गैर कृषि क्षेत्र में कृषि के मौसमी चरित्र के विपरीत पूरे साल काम उपलब्ध होते हैं।

कृषि और गैर–कृषि क्षेत्र रोजगार में मजदूरी की तुलना से पता चलता है कि गैर–कृषि क्षेत्र में कई सामान्य कार्यों के बदले अधिक मजदूरी मिलती है। निर्माण क्षेत्र में एक राजमिस्त्री की दैनिक मजदूरी खेतों में निराई करने वाले की मजदूरी के दोगुना से अधिक और जुताई करने वाले से करीब–करीब दोगुना है। बढ़ई, ड्राइवरों, लुहारों आदि जैसे गैर–कृषि पेशा में लगे लोगों की मजदूरी खेतिहर मजदूरी से कम–से–कम 15–20 प्रतिशत ज्यादा है। कृषि संबंधी विभिन्न पेशा की तुलना में औद्योगिक मजदूरी डेढ़ गुणा से ज्यादा है जिससे इसकी वरीयता का कारण स्पष्ट होता है।

2006–07 के बाद कृषि क्षेत्र में उच्चतर मजदूरी के पीछे जीडीपी की 'ताकत' काम कर रही थी जिसके कारण वास्तविक खेतिहर मजदूरी की वृद्धि में मदद मिली।

यह मोटे तौर पर थाइलैंड और चीन जैसे दूसरे विकासशील अर्थव्यवस्थाओं के अनुरूप ही था (युसुफ एवं सैश, 2008)। इसके साथ–साथ 2006 से मनरेगा के माध्यम से ग्रामीण श्रम बाजार में सरकार पहलों के 'दबाव' वाले कारक भी काम कर रहे थे जिनकी बदौलत ग्रामीण मजदूरों को अपने खेतिहार कामों के लिए उच्चतर मजदूरी माँगने का हौसला मिला था।

आगे हम मनरेगा जैसे 'दबाव' वाले कारकों का विश्लेषण करेंगे।

मनरेगा का प्रभाव

महात्मा गाँधी राष्ट्रीय रोजगार गारंटी अधिनियम (एमजीएनआरईजीए) यानी मनरेगा विश्व का सबसे बड़ा अधिकार–आधारित सामाजिक सुरक्षा पहल है। क्रमिक रूप से फरवरी 2006 में इसकी शुरूआत की गई थी जब पहले चरण में 200 सर्वाधिक पिछड़े जिलों को शामिल किया गया था।

नरेगा (एनआरईजीए) का महत्व इस तथ्य से पता चलता है कि इससे मजदूरी आधारित रोजगार कार्यक्रम काा एक अधिकार सम्मत ढाँचा तैयार हुआ है जिसके तहत सरकार का यह कानूनी दायित्व बनता है कि वह इच्छुक लोगों को रोजगार मुहैया करे। इस प्रकार इस कानून से रोजगार का अधिकार सुनिश्चित करने की दिशा में सामाजिक सुरक्षा का बड़ा उद्देश्य पूरा होता है।

इसका लक्ष्य प्रत्येक ऐसे परिवार को जिसके वयस्क सदस्य अपने आवास के 6 किलोमीटर के दायरे में अकुशल मजदूरी करने के इच्छुक हैं, एक वित्तीय वर्ष में कम–से–कम 100 दिनों के रोजगार की गारंटी करना है। ऐसा समझा जाता है इसके तहत अधिकांश कार्य खेती संबंधी कार्यों की अपेक्षा कम मेहनत और कम समय में करने वाले होते हैं। परिणामस्वरूप, इस योजना के बारे में अक्सर कहा जाता है कि श्रम अल्पता और खेतीहर मजदूरी की बढ़ोतरी में इसकी महत्वपूर्ण भूमिका है। फिर भी मनरेगा की मजदूरी की दर अधिकतर राज्यों में प्रचलित खेतिहर मजदूरी दर से कम है, हालांकि बिहार और मध्य–प्रदेश इसके अपवाद हैं जहाँ यह खेतिहर मजदूरी के समुतल्य है। तथापि, मनरेगा की व्याप्ति के आँकडे बताते हैं कि उत्तर–प्रदेश, मध्य–प्रदेश, राजस्थान, तमिलनाडु इत्यादि राज्यों में जहाँ कृषि से सर्वाधिक मजदूरों

RNI No. 831/1957
पोस्टल रजि० DL (S)-01/3092/2018-20
पहले भुगतान किये बिना पोस्ट करने का लाइसेंस नं० U(C)-92/2018-20

प्रकाशन की तिथि : 1 नवंबर, 2019
नई दिल्ली पी.एस.ओ, नई दिल्ली–1,
तारीख 4 एवं 5, नवंबर 2019

का पलायन हुआ है, मनरेगा के तहत सबसे ज्यादा रोजगार मुहैया किए गए जिससे मनरेगा और श्रम अल्पता की समस्या का संबंध पता चलता है।

आँध्र–प्रदेश में केपीएमजी द्वारा किए गए एक अध्ययन से खेतिहर मजदूरों की उपलब्धता और बढ़ती खेतिहर मजदूरी पर मनरेगा योजना का प्रभाव पता चला है। यह पाया गया कि कई मामलों में विभिन्न पंचायतों ने मनरेगा का कैलेण्डर और कृषि संबंधी जरूरतों में तालमेल का ध्यान रखा ताकि कोई एक दूसरे से बाधित न हो जिससे स्पष्ट होता है कि विभिन्न राज्यों में खेतिहर श्रमिक अल्पता में मनरेगा की भूमिका हो सकती है।

जैसा कि पहले कहा गया है, खेतिहर मजदूरों की उपलब्धता तय करने में मनरेगा जैसे 'दबाव' वाले कारकों का भी योगदान रहा है। एक तो खेती में मजदूरी दर बढ़ाने में इसका योगदान रहा है और दूसरे, ग्रामीण इलाकों में श्रमिक उपलब्धता में भी इसकी भूमिका रही है। 2007–08 से 2011–12 के दौरान अवास्तविक खेतिहर मजदूरी में 17.5 प्रतिशत तक की वृद्धि हुई, जबकि इसी अवधि में वास्तविक खेतिहर मजदूरी में 6.8 प्रतिवर्ष के दर से बढ़ोतरी हुई।

इससे कृषि क्षेत्र की वहन क्षमता प्रभावित हुई है, साथ ही हर समय उपलब्धता भी प्रभावित हुई है। विगत कुछ वर्षों में कृषि में श्रम बल की कमी पूरे देश में व्यापत रही है जिससे अलग–अलग पैमाने पर लगभग सभी क्षेत्र प्रभावित हुए हैं। व्यस्त मौसम में बुवाई, कटाई आदि कार्यों के लिए श्रमिकों की अनुपलब्धता किसानों के बीच आम शिकायत रही है।

O-O-O-O-O-O-O-O-O-O-O-O-O

भारत कृषक समाज ए–1, निजामुद्दीन वेस्ट, नई दिल्ली– 110013, फोनः 011–24359509, 9667673186, ई–मेलः ho@bks.org.in, वैबसाईटः www.farmersforum.in के लिए श्री उरविन्द्र सिंह भाटिया द्वारा सम्पादित, मुद्रित व प्रकाशित तथा एवरेस्ट प्रेस, ई 49/8 ओखला इण्डस्ट्रीयल एरिया, फेस –2, नई दिल्ली –110020 द्वारा मुद्रित।